REVIEW OF RESEARCH
IMPACT FACTOR : 5.7631(UIF) UGC APPROVED JOURNAL NO. 48514 ISSN: 2249-894X
VOLUME - 8 | ISSUE - 7 | APRIL - 2019

आज के समाज में गहराता वैश्वीकरण का संकट और केदारनाथ सिंह की कविताएँ

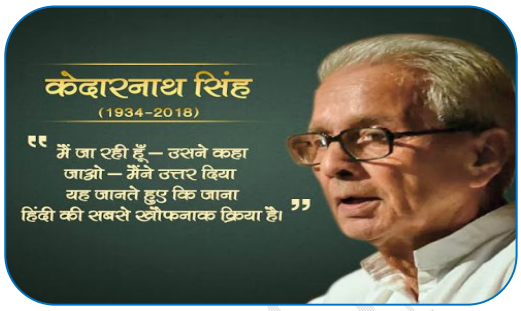

डॉ. जोतिमय बाग
देशबन्धु महाविद्यालय, चित्तरंजन.

प्रस्तावना :

स्वाधीनता के बाद भारतीय जीवन पर विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी का तेज़ी से विकास हुआ है। इसके बढ़ते कदम ने मनुष्य को ही पीछे छोड़ दिया है। विज्ञान की बढ़ती संस्कृति आज मानव संस्कृति को बौना कर दिया है। इतना बौना की आज हमारी संस्कृति भ्रष्ट और नष्ट के कगार पर है। मानव मूल्य में अब भावशुन्यता शेष रह गया है। लीला–घर जगूड़ी की कुछ पंक्तियाँ याद आ जाती हैं–

हत्या के लिये एक नया शस्त्र देती है प्रौद्योगिकी, तकनीक कष्ट कम करने के बहाने उजागर होती है और छिपा देती है हथियार की क्रूरता को। हिन्दी के समकालीन कवियों ने इसी चेतना शुन्य मानवीयता के खतरे को पहचान कर मानव मूल्य की भावना को पुनर्जावित करने का प्रयास किया है। इस लेख में केदारनाथ सिंह की कविताओं का मुकम्मल पाठ करने की कोशिश कर रहा हूँ।

आज भी भारतीय समाज पुरातन रूढ़ि से अपने आप को मुक्त नहीं करा पाया है, बल्कि ये पुरातन रूढ़ि ही वेश–भूषा बदल कर नये रूप में सामने आ रहे हैं। याद आ जाती हैं ये पंक्तियाँ बीतता नहीं रह–रह कर दौड़ाता है। ये समाज भी कुछ ऐसा ही प्रतीत हो रहा है। केदार जी इस 'आधुनिक समाज' पर विचार करते हुए कहते हैं– मेरा समाज, सामन्तवाद के विरूद्ध एक लम्बे संघर्ष के बाद भी, अपने मूल्यों और अपने आचरण में सामन्ती अवशेवों से अभी पूरी तरह मुक्त नहीं हो पाया है। उसी अवशेष का एक रूप है जाति व्यवस्था जो मेरे चारों ओर है। मैं चाहूँ या न चाहूँ, अपने समाज में अपने सारे मानववाद के बावजूद, मैं एक जाति–विशेष का सदस्य माना जाता हूँ। यह मेरी सामाजिक संरचना की एक ऐसी सीमा है, जिससे मेरे रचनाकार की संवेदना बार–बार टकराती है और क्षत–विक्षत होती है।[1] प्रश्न यह उठता है कि पूँजीवाद के इस दौड़ में आखिरकार केदारजी सामंतवाद पर चर्चा क्यों कर रहे है? गौर तलब है कि 'वर्तमान सांस्कृतिक संकट इसलिए और खतरनाक है, क्योंकि भारतीय समाज के वे सारे संकट जिनका समाधान नहीं ढूंढा गया, नहीं ढूढ़ने दिया गया और नहीं ढूंढ़ा जा सका वे सब आज शासक वर्गों की शह पाकर स्थिति को अनुकूल पा रहे हैं और सिर उठा रहे हैं, क्योंकि शासक वर्ग स्वयं संकटग्रस्त होने के कारण अपने शत्रुओं अर्थात् मेहनतकश जनता को भरमाए–भटकाए रखने के लिये स्वयं अपने शत्रुओं से हाथ मिलाकर उन्हें खुलकर खेलने दे रहा है। भारत जैसे पिछड़े देशों में तो विशेष रूप से, सामन्तवाद को जीवन दान पूंजीवाद ही प्रदान कर रहा है– अपने रक्षार्थ चाहे वह अर्थतंत्र में हो, राज्यतंत्र में हो या समाजतंत्र में। इतिहास के समस्त संकटों में आ जुड़े हैं यह नया संकट।' आज पूँजीवाद की क्षमता अधिक है, क्योंकि वह सत्ताधारी भी है। इसलिए संस्कृति मानवहित के विरूद्ध जितने कारगार ढंग से इस्तेमाल हो रही है उतना उसके पक्ष में नहीं। केदारनाथ सिंह की कविता इस संकट को पहचानते है। कविता का शीर्षक है 'दिग्विजय का अश्व'

अभी, बिल्कुल अभी
दिग्विजय का अश्व इस पथ से गया है
मकानों पर उड़ रही है धूल
पेड़ घर–घर काँपते हैं
अभी, बिल्कुल अभी।

केदार जी की एक और कविता है 'विद्रोह' यह विद्रोह प्रकृति का विद्रोह है जो मानवीय चेतना शुन्य संस्कृतिक को टक्कर दे रही है, उनके आज़ादी की छटपटाहट दरअसल विद्रोह करने को आतुर हो उठता हैं देखिए

आज घर में घुसा
तो वहाँ अजब दृश्य था
सुनिए–मेरे विस्तर ने कहा–
यह रहा मेरा इस्तीफा
मैं अपने कपास के भीतर
वापस जाना चाहता हूँ
और कविता का अंत कुछ इस प्रकार होता है।
नल से टपकता पानी तड़पा–
अब तो हद हो गयी साहब!
अगर सुन सकें तो सुन
लिजिए

इन बूँदों की आवाज़–

कि अब हम
यानी आपके सारे के सारे कब्दी
आदमी की जेल से
मुक्त होना चाहते है।

पूंजीवाद द्वारा फैलाया गया यह अर्थतंत्र का एक माया जाल है, चारों ओर दिखा रहा यह अद्भूत कमाल है, यहाँ मेहनतकश लोग कंगाल है और उद्योगपति माला–माल है। सचमुच यह एक बड़ा माया जाल है। केदार जी की एक कविता है 'पूँजी', यह केदार जी की अपनी पूँजी है। इसे उन्होंने अपने ढंग से परिभाषित किया हैं ज़रा देखिए

सारा शहर छान डालने के बाद
मैं इस नतीजे पर पहुँचा
कि इस इतने बड़े शहर में
मेरी सबसे बड़ी पूँजी है
मेरी चलती हुई साँस
मेरी छाती में बंद मेरी छोटी–सी पूँजी
जिसे रोज में थोड़ा–थोड़ा
खर्च कर देता हूँ

आज हमें पूँजीवाद और साम्राज्यवाद द्वारा फैलाए गये संकट को समझना होगा। यह समझना लेगा कि प्रयास हो रहा है कि समाज अपने सभी सकारात्मक–रचनात्मक विरासत से, उसे समृद्ध करने के संघर्ष से अपने नैतिक–व्यवहारिक दाय से विमुख हो जाए और यह कि अगर समय रहते सचेत न हो जाए तो चिड़िया चुग गई खेत' को साकार करते फिरेंगे।

1) समकालीन हिन्दी आलोचना– संपादक, परमानन्द श्रीवास्तव
2) अन्य संदर्भ पुस्तके
i) कार्लमार्क्स, 'मजूरी दाम और मुनाफा'
ii) 'आधुनिक भारत का इतिहास', विद्याघर महाजन
iii) 'हिन्दी आलोचना', विश्वनाथ त्रिपाठी
3) पत्रिकाएँ
प) विकल्प–4
ii) संकल्प–7
iii) कसौटी–3,4,5,6,7
iv) वर्तमान (आलोचना विशेषांक)

डॉ. जोतिमय बाग
देशबन्धु महाविद्यालय, चित्तरंजन.

LBP PUBLICATION